भगवत् कृपा

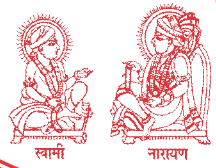

THE DIVINE GRACE

महाप्रभु स्वामिनारायण प्रणीत सनातन, सचेतन और सक्रिय गुणातीतज्ञान का अनुशीलन करने वाली मासिक सत्संगपत्रिका

वर्ष-17, अंक-5 गुरूवार, 26.5.94	सम्पादक : साधु मुकुंदजीवनदास गुरु ज्ञानजीवनदासजी मई, 1994	वार्षिक चन्दा-30.00 प्रति अंक : 3.00

अनुपम योगेश्वर—प.पू. काकाश्री

जिसके जीवन की पल-पल पराभक्ति का परम प्रतीक थी, संबंध में आए चैतन्यों का उत्कर्ष—यही जिसका परम कर्त्तव्य था......जिसके समग्र हलन-चलन में भक्तों के प्रति की करूणा और आत्मीयता की ही सुगंध आती अखंड महसूस होती थी, जिसने समग्र सत्संग समाज को निर्दोषबुद्धिरूपी भावात्मक एकता और मैत्रीभाव के ही अमृत से सींचा.....सर्वोत्कृष्ट आत्मीयता का परम आदर्श ऐसे समग्र गुणातीत समाज के प्राणाधार व अनुपम योगेश्वर प.पू. काकाजी का प्रागट्यदिन....**12 जून**.......

प.पू. काकाजी का जीवन यानि—**करुणामंडित और औदार्यपूर्ण सखाभाव का अप्रतिम काव्य** ! श्री कृष्ण के पश्चात् भगवान और भक्त के बीच ऐसा मैत्रीपूर्ण व्यवहार पू. काकाश्री के अलावा कहीं पर भी देखने को ही नहीं मिलेगा। हम सब की गल्तियाँ, स्वभाव निभाते हुए प.पू. काकाजी की नितरती करुणा व सखाभाव का हम सभी ने हमारे जीवन में अनुभव भी किया.....

प.पू. काकाजी यानि—'मैत्रीभाव ! उनको सब जँचते थे। किसी प्रकार सागर के पानी की गहराई या विशालता नापी नहीं जा सकती व आकाश की अवधि नापी जाए ऐसी नहीं, उसी प्रकार प.पू. काकाजी के जीवन का समग्र दर्शन करें तब ख्याल पड़े कि उनके दयालु स्वभाव की भी मानो कोई अवधि ही नहीं.....

प.पू. काकाजी—अलौकिक जीवन के हर एक प्रसंगों में हजारों को मदद रूप बने........भाई-बहन, सास-बहू, पति-पत्नी, माता-पिता, गुरु-शिष्य, प्रेमी-प्रेमिका के संघर्ष, छोटे-बड़े, बेकार या श्री महंतो, नौकर या व्यापारियों के अनेक झगड़ों को शान्ति से.....स्नेहपूर्वक हल किया... अनेक हरिभक्तों के जीवन में खूब रसबस हो गए। अलग-अलग रीत से इस व्यक्तित्व को निहारा है, अनुभव किया है और धन्य बने हैं। किसी के आत्मीय स्वजन, परम मित्र, आधी रात को भी हमारे दुःख में आकर खड़े रहें ऐसे स्नेहीजन, जिसकी गोद में हृदय खाली कर सकें ऐसी ममतामयी माँ, सच्ची राह बताने वाले पथप्रदर्शक.....किसी को सखा के रूप में, किसी

को कुशल व्यापारी के रूप में, किसी को अनुपम गुरुभक्त के रूप में तो किसी को अन्तर्यामी सर्वज्ञ मानवस्वरूप में विचरती रोम-रोम में परब्रह्म को धारी हुई अलमस्त मूर्ति के रूप में ! आज सभी वे हरिभक्त प.पू. काकाजी द्वारा कराए अनुभव, प्रसंगों को लिखने बैठे तो हर एक का एक-एक निजी भागवत् बन जाए। सच ! अविरत परिश्रम करके लौकिक जीवन में भी प.पू. काकाजी ने आध्यात्मिकता प्रगटाई.....ऐसा एक भी क्षेत्र नहीं कि जिसमें प.पू. काकाजी ने रस नहीं लिया हो। और....यूं हर क्षेत्र में रस लेने का एक ही हेतु कि सभी को योगीजी महाराज-भगवान स्वामिनारायण का संबंध हो व सुखी हों.....

प.पू. काकाजी सूर्यसमान थे। विरोधियों को भी प्रकाश देते। 'भगवान बनना है—पुजवाना है' वगैरे अनेक आक्षेप उनके सामने आए फिर भी हँसते ही रहे। हेतवाले संतों, युवकों, बहनों, सब मुक्तों का या गुरुहरि योगीजी महाराज का विरोध करने वालो, टीका-चर्चा करने वाले कोई व्यक्ति का स्वप्न में भी किंचित् प.पू. काकाजी ने अभाव नहीं लिया। अखंड प्रकाशमय प्रतिभा के वे पूर्ण प्रतीक थे। अखंड सहजानंदी ज्ञानसमाधि में रहते हुए पल-पल स्वामी-सेवकभाव का दर्शन हर एक ने उनमें किया है। कुछ काम बना, नहीं बना वे कभी विचलित दिखाई नहीं पड़े......

गुणातीत समाज के हर एक व्यक्ति का यह अनुभव है कि—एकदम मौके पर जब किसी को सूझ ही ना पड़ रही हो कि क्या करें? पूरी बाजी हाथ से जाती दिखाई पड़ रही हो.....सब दुविधा में हों कि यह Problem solve कैसे होगा? होगा या नहीं? ऐसे ऐन मौके पर सारी बाजी संभालकर मुश्किल से मुश्किल स्थिति में विरोधों के सामने खड़े होकर जूझकर काम पार उतार देने का पराक्रम प.पू. काकाजी ने अनेकों बार करा-हम सभी ने देखा है। बापा की आज्ञा से पढ़े-लिखे युवकों को साधु बनाने के समय पर.....बहनों के भगवान भजने की शुरूआत के समय.....संस्था से विमुख होने के समय पर गालियाँ खाते उनकी मस्ती गई नहीं व अपने ही कहे जाने वालों से उपेक्षा करने पर भी खेलदिली से अपनी छाती पर घाव लेने से भी वे कभी पीछे नहीं रहे....और किसी को पता भी नहीं चलने दिया......

प.पू. हरिप्रसादस्वामिजी के मार्मिक परावाणी रूप उद्‌गार प.पू. काकाजी के जीवन का दर्शन कराते हैं "**प.पू. काकाजी को मैं सुहृद्‌सम्राट कहता हूँ। अनंत प्रकार के ज्वार-भाटे आये, परन्तु उनके जीवन में मुक्तों के प्रति की प्रीति कभी कम नहीं हुई। एक रूचि से, एक दिल से और शांति से हम भगवान भजने के रास्ते पर चल सकें उसके लिए उन्होंने खूब परिश्रम किया। सामने से हमारी संभाल की। मन-बुद्धि को दासी बनाकर प्रभु के आकार से बनाने की-मुक्तों के आकार से बनाने इस गुणातीत सत्पुरुष के जीवन ने हमें अद्‌भुत प्रेरणा दी है।**"

प.पू. काकाजी हमें कहते थे—'अक्षरपुरुषोत्तम का, शास्त्रीजी महाराज का, योगीजी महाराज का नाम दिगंत में, समस्त विश्व में रोशन हो जाए और तुम सब योगीबापा के आशीर्वाद झेलने 'पात्र' बनकर, एकत्वभाव से वर्तकर हमारे जैसे सुख, शांति, आनंद के भोक्ता बनो'.....और ब्राह्मीशक्ति के धारक बनने आती मुश्किलें, कठिनाईयाँ, अड़चनों, विराम स्थानों, उदासीनता की भूमिका, साम्यावस्था माया, रिद्धि-सिद्धि, ऐश्वर्य की भूमिका जहाँ स्वामी—सेवकभाव चूक जाएँ ऐसी क्षतियाँ दूर करने उन्होंने अनंत techniques बताई और इस हेतु 1984 से तो प.पू. काकाजी निम्न छः—सात स्वामी की बातों को बहुत बार-बार पढ़वाते थे। इन बातों को

लेकर हम चलें वह उनका आग्रह था.....

ये बातें मार्मिक रहस्य लिए हुए हैं। श्रेयार्थी साधक यदि इन बातों का मनन, चिंतन और निदिध्यासन करके सतत् जाग्रतता रखकर, साक्षी रूप बनकर अपनायेगा तो ये हमें महाराज की अपरोक्ष अनुभूति में-सर्वोपरि कर्तापन के भाव में अखंड यानि अखंड ज्ञानसमाधि में ले जायेंगे। आइये, स्वामीजी के रहस्यमय सिद्धांतरूप इन ब्रह्मसूत्रों को अपने जीवन में साकार करने हम भी चिदाकाश की भूमिका में प्रवेश करें......

* संवत् 1919 के आषाढ़ सुदी चतुर्थी के दिन स्वामी ने बात करी कि-कल्पना रहती है और अधूरापन रहता है, वह अज्ञान है। क्योंकि स्त्री तो भोगी नहीं जाये और पैसे को तो छुआ ही नहीं जाए व स्वादिष्ट खाया नहीं जाए तथा कपड़े तो अधिक रखे नहीं जाएं। यह सब तो नियमों का उल्लंघन करें तब हो सकता है, परंतु जिसे मंदिर में रहना हो वे तो जैसा लिखा है वैसा पालेगा तब ही सुखी हो पायेंगे। सो, यूं ही बेमतलब कल्पना करनी नहीं। हमें तो बहुत सारे लोगों का दुःख टालने के लिए जाईज कपड़े, खाना व पुस्तक है और मन की कल्पना तो बड़े-बड़े अवतार कहलाये हैं, उनकी भी पूरी नहीं हुई है। आज तो प्रगट भगवान व उनके प्रगट साधु के संबंध वाला एक ही ग्रंथ पढ़ो व समझो और फिर अगर कल्याण में अधूरा रहे तो उसके हम जमानती हैं। यह बात कर रहे हैं, वह अज्ञान टालने कर रहे हैं। वह अज्ञान और कल्पना आत्मदर्शन से भी टले ऐसा नहीं व उर्ध्वविर्य वाले की भी नहीं टलती। वह तो इस प्रगट साधु के समागम से टलती है। हमें दो बातों का आग्रह था; एक तो सत्संग कराने का और दूसरा इस मंदिर में अच्छे-अच्छे मनुष्य रखने का। ये दो बातें पूरी हुई। अब एक ही बात का आग्रह है कि इन सब को हमारे जैसा साधु करना है। अनुवृत्ति–मर्जी पालने वाले और सद्भावना वाले निहाल हो जाएँगे। *प्र–12,35*

सही अर्थ में हमारी अज्ञानता व कल्पना टालने अब भी उस विभूति पुरूष का महासंकल्प कार्य कर रहा है...सिर्फ हमारे जाग्रत होने में कसर है.....

* संवत् 1919 के भादों सुदी त्रयोदशी के दिन स्वामी ने बात करी कि–सौ प्रकार की कला–चालाकी करके स्वभाव छोड़ देना और करोड़ कला–चालाकी करके भी इस संत के साथ जीव जोड़ देना। जिसके साथ जीव जोड़ना चाहिए और जहाँ से वृद्धि पाई जा सकती है वहाँ से जीव हटता है। पर, इस संत के साथ जुड़े बिना और उसमें जीव बांधे बिना कोटि कल्प तक सब प्रकार से निर्दोष नहीं हो सकेंगे। *प्र–14,91*

प.पू. काकाजी की परावाणी में हमने कई बार सुना था कि **बंदर मन छोड़ दो-मन का राज्य छोड़ दो-गुरूराज्य में प्रवेश कर जाओ**......कोई भी उनकी बात स्वामी की बातों के आधार बिना नहीं होती थी।

* संवत् 1919 के भादों वदी–द्वादशी के दिन स्वामी ने बात करी कि–सारी बात का सिद्धांत यह है कि ब्रह्मरूप होना है। महाराज ने कहा है; भले ख्याल ना पड़े और सूक्ष्म देह को अपना मान लो, पर स्थूल देह को तो अपनारूप मानना ही नहीं। महाराज ने लेख लिखवाया था उसमें लिखा है कि–आहार शुद्धि व अंतःकरण शुद्धि हो, तो ध्रुवानुस्मृति रहती है। सभी क्रियाओं में अपने आप को आत्मारूप मानना और इन्द्रियों के बहकाने पर नहीं जाना, तो बल मिलता जाएगा। *प्र–14,204*

* कोई सर्वस्व अर्पण कर दे ऐसा हो, देह को नहीं गिने ऐसा हो, इन्द्रियाँ–अंतःकरण को नहीं गिने ऐसा हो, लेकिन तीन देह के भाव टाल दे

ऐसा नहीं मिल सकता। देह के भाव छोड़े बिना धाम को नहीं पा सकेंगे। ये बातें हृदय में जमें और स्वयं को ब्रह्मरूप का नक्की हो तब बिना कोई विघ्न धाम में जा सकते है। जीते जी मरना सीखें और मरने की अदा से चले उससे यह बात सिद्ध होती है। महाराज का आवतार मूल अज्ञान जो कारण शरीर–उसका नाश करने हुआ है। कारण शरीररूप ब्रह्महत्या जीव को चिपटी है। उसने हमें करोड़ों जन्म के चक्कर में डाले हैं। वह कारण शरीर टालने का उपाय कारियाणी के बारहवें वचनामृत में बताया है कि महाराज का ध्यान व महाराज का वचन हृदय में धारें तो ही कारण शरीर टले। सो इस बात का बीज हृदय में रखना। इस ज्ञान का लेश हृदय में हो और उसका श्रवण व मनन हो तो आधा देह शून्य जैसा हो जाए और फिर दृढ़ होने पर दोष मात्र टल जाए। सो साधु होना व गुण से पर होना। साधु हुए बिना तो गुण से पर हो नहीं सकेंगे। रामानंदस्वामी का एक शिष्य दस साल से साधु हुआ था, लेकिन 'क्हाना वाघेला' मिटा नहीं। इसलिए, यह ज्ञान सीखे बिना महाराज की आज्ञा नहीं पाली जाए और सच्ची साधुता आए नहीं। फिर मेरा-तेरा भी मिटे नहीं। **'अकेले कैसे रहा जाए तुम्हारे बिना प्रभुजी !'** यह गाया तब महाराज ने कहा दूसरा पुरूष करो तो रहा जाएगा ! सो, ऐसे कीर्तन गाना नहीं। लेकिन अपनी आत्मा में महाराज को धारना, तब अकेले कहलाए ही नहीं। सो जिसमें महाराज की मूर्ति का वर्णन आए ऐसे कीर्तन गाना और महाराज की मूर्ति को देखते रहना। ध्यान, भजन और आज्ञ–यह कारण शरीर टालने का उपाय है। *प्र–14,205*

हर सभा–हर शिविर में प.पू. काकाजी पूछते थे–तुम्हारा जीव ब्रह्मरूप हुआ? तुम स्त्री-पुरुषभाव से परे हुए? फिर.....गुणातीतानंदस्वामी की यह बात भी पढ़वाते थे कि सोने के मंदिर भी चाहे बनें, सोने की पालकी में भी बैठो.....उड़ते भी हो जाओ या नीचे जमीन में भी चले जाओ....उससे क्या? अगर तुम भगवान की मूर्ति में रहकर काम करते नहीं हुए–यानि ब्रह्मरूप नहीं हुए तो सब बेकार......

* जीव मनन तो करता है लेकिन गुणात्मक मनन होता है। तीन गुण से अलग होकर कहाँ मनन होता है? दास का दास कोई हो, लेकिन गुणातीत होना वह तो बहुत कठिन है। मुक्तभाव को पाये हो, तब भी यह गुणातीत ज्ञान सीखे बिना फर्क रह जाए। *प्र–14,206*

* मुक्तानंदस्वामी को महाराज के साथ दस साल तक इस ज्ञान का फर्क रहा था। तीन अंग का–मध्य का बासठवाँ वचनामृत समझाया तब 'मेरा मत कहुँ वह सुनो'–यह कीर्तन करा !

वाग वैखरी शब्दझरी शास्त्रव्याख्यानकौशली,
वैदुष्यं विदुषां यद तत् भुक्तये न तु मुक्तये।।

यूं ज्ञान मात्र का उपयोग जिसे विषय प्राप्त करने की लगन के ऊपर है उसे 'पेट के लिए–पुराणी' जानना। अक्षररूप होकर पुरुषोत्तम नारायण की उपासना करनी, यह रीत तो महाराज ने ही प्रवर्तायी है। इससे पहले किसी ने ऐसा साफ–सुथरा निर्णय करा ही नहीं। सो, महाराज अवतार मात्र के अवतारी पुरुषोत्तमनारायण हैं और यह जो तुम्हें बात कर रहा है वह ही मूल अक्षर धाम है। पुरानी लेख में परमहंसों के नाम बताये थे उसमें गोपालानंदस्वामी को श्रीकृष्ण, मुक्तानंदस्वामी को नारदजी, नित्यानंदस्वामी को व्यासजी, शुकमुनि को शुकदेवजी, ब्रह्मानंदस्वामी को वृहस्पति, दादाखाचर को अर्जुन, मूलजी ब्रह्मचारी को हनुमान, चैतन्यानंदस्वामी को दत्तात्रय, जीवुबा-लाडुबा को राधालक्ष्मी–यूं अलग-अलग नाम दिए है। लेकिन उन सब में

हमें एक को ही अक्षर कहा है। स्वयं के योग में जो-जो आया उन सभी को महाराज ने अपने संबंध से मुक्तभाव को प्राप्त कराया। गोपालानंद स्वामी ने इस बात का रहस्य जाना था। इसलिए उनसे जुड़े सभी को यहाँ जूनागढ़ भेजा है। यूं जीव को ब्रह्मरूप–गुणातीत करने पर ही महाराज का बहुत आग्रह। इसलिए दिन में एक बार तो इस बात का मनन करना ही करना। इस बात का बीज होगा तो वह किसी न किसी जन्म में उग आएगा। हमारी देह नहीं होगी तब यदि इस बात का मनन नहीं रखोगे, तो सब क्रियारूप हो जायेंगे और स्वयं को ब्रह्मरूप मानना वह सूझ रहेगी नहीं। *प्र–14,207*

* शुकजी ने परीक्षित को समझाया कि ''मैं राजा हूँ और मुझे ब्राह्मण का श्राप लगा है व मुझे सर्प का डंक लगेगा ऐसी पशुबुद्धि का त्याग करके तेरी गर्भ में जिस भगवान ने रक्षा करी है उन्हें याद कर ! इतनी बात में सारी भागवत् का सार है। *प्र–5,42*

परिक्षित की 'पशुबुद्धि' वाली यह स्वामी की बात प.पू. काकाजी ने पू. गुरुजी को बहुत अच्छी तरह समझाई थी और अभी हाल ही में अमदाबाद में मनाई गई प.पू. हरिप्रसादस्वामिजी की जयंती के समारोह में यह बात पू. गुरुजी ने अपने प्रवचन में करी थी। उन्हीं के शब्दों में–

मैंने जब स्वामी की यह बात पढ़ी थी, तब मुझे सहज विचार आया कि परीक्षित ने शुकदेव के पास कोई शिकायत के तौर पर तो यह बात करी नहीं थी, कोई गिला–शिक्वा के रूप में करी नहीं थी–जैसे कि स्वधर्म में रहकर मैंने तो प्रजा का संरक्षण करा–कभी भी किसी को अन्याय नहीं करा, जानबूझ कर किसी का बिगाड़ा करा नहीं है–वगैरे-वगैरे, फिर भी मुझे यही मिला न? परीक्षित ने तो अपनी ही भूल का इकरार करके उस भूल के कारण जो दण्ड मिला–इसकी सिर्फ बात ही करी थी।

उसमें गुणातीतानंदस्वामी ने उसकी इस विचारधारा को पशुबुद्धि किस कारण कही होगी? और यह प्रश्न मैंने एक बार पू. काकाजी को पूछा तब वे एकदम बोले–'मैं यही बात तो करा करता हूँ कि जितना हम में और जानवर में फर्क है उतना ही फर्क दूसरी ओर हम में और ऐसे भक्त में–साधु में है कि जो उसे मिले ऐसे भगवान को ही सर्व का कर्ता-हर्ता, प्रेरक-प्रवर्तक और नियंता समझ कर पल-पल का जीवन जीता है।

केवल वृत्ति के अधीन जीए वह जानवर

और

बुद्धि की गिनती से–कि यह हुआ इसलिए अब यूं होगा ऐसे तर्क से–

cause & effect के rule को मान कर जीए वह मानव ! और–भगवान तो पल में चाहे सो करे और मैं इनका हूँ।

तो, भूल भले हो गई। भजन का बल लेकर अब दोबारा नहीं हो उसकी जाग्रकता रखकर जीने का प्रयत्न करूँगा। दंड देना होगा तो भगवान देंगे। लेकिन, काल–कर्म और माया की हुकूमत मुझ पर चलेगी ही नहीं यूं मानकर जीए वह भक्त जिसे प.पू. पप्पाजी महामानव कहते हैं। इसलिए ही तो मैं एक बात करता हूँ–

'Do not consider the facts as they are, go according to your inner conviction.'

हमारी Conviction-निष्ठा क्या है?

सर्व का प्रेरक, प्रवर्तक, नियंता, कर्ता/हर्ता भगवान ही है और वे प्रगट हैं मेरे हैं–सर्वोपरि हैं। वे कभी मेरा अहित होने ही नहीं देंगे। मेरा कुछ भी बिगड़ने नहीं देंगे। यूं निर्भय और निश्चिंत होकर जीये वह निष्ठा' कही जाती है। यह एक evolution है।

जैसे जानवर और मानव-इन दोनों में योनी का ही फर्क पड़ गया वैसे ''मानव में से महामानव''– यह योनी ही बदल गई ! भगवान की गोद में बैठ गया–उसका तो इसी देह के रहते हुए ही नया जन्म हो गया ! अब पुराने प्रारब्ध कहाँ याद करना रहा? जब कोई करोड़पति हमें गोद ले ले तो पुराना कोई कर्जा हमारे सिर पर वह रहने देगा? उसकी चिंता हमें रहेगी? लेकिन हम यह बात सचमुच मानते ही कहाँ है? इसलिए ही तो मैं कहता हूँ कि हम 'श्रद्धालु नास्तिक' ही है।

प.पू. काकाजी के जीवन में गुणातीतानंदस्वामी की यह बात हुबहु दिखाई पड़ती है। कभी कोई व्यक्ति, प्रसंग, संजोगों, घटनाओं, परिस्थिति को उन्होंने नहीं देखा....विपरीत संजोगों, विपरीत परिस्थिति, भयंकर अपमानों में ही यही एक दृढ़ विश्वास कि मेरे योगी जो कुछ भी कर रहे हैं वह सदैव मेरे हित में ही कर रहे हैं और इस निष्ठा ने उनके चेहर पर से कभी स्मित जाने नहीं दिया।

इन सभी बातों को पढ़ने से ही पता चलता है कि वे हम से कितनी ऊँची अपेक्षा रखते थे कि किसी भी तरह मेरे बच्चे यदि इन बातों को लेकर चलने लगें और निहाल हो जाएँ।

तो प.पू. काकाजी ने यह जो रहस्य समझाया– उसे पकड़कर अब हम पल-पल जिएं छोटा-बड़ा हर एक कार्य का आरंभ उन प्रभु को ही पलभर याद करके, प्रभु के नाम का नमक डालकर परिस्थिति–संजोगों को नज़र में लिए बिना बेहिचक, निर्भयता से करें....तो जीवन में आश्चर्यों की परम्परा अनुभव होगी और 'वाह प्रभु वाह'– यूं केवल धन्यवाद ही प्रभु को देना रहेगा। प.पू. काकाजी के प्रागट्य दिन के शुभ अवसर पर अंतर से यही प्रार्थना !

★ ★ ★

अनिर्देश की गतिविधियाँ.......

* भावनगर के एक ब्राह्मण के पास सद्. गोपालानंदस्वामी के प्रसादीभूत बाल स्वरूप 'कृष्ण' (लालजी) थे......कुल परम्परा से बम्बई 'भाईखला' मॉडल स्कूल के प्रिंसिपल साहब श्री जशवंतलाल भट्ट जी के पास बाल स्वरूप कृष्ण (लालजी) ने सेवा ग्रहण की। पू. गुरुजी ने उसी स्कूल में प्रारंभिक शिक्षा प्राप्त की थी। गुरुहरि योगीजी महाराज ने इन लालजी के दर्शन करके उनको थाल भी धराया था....और पू. गुरुजी ने गुरुहरि योगीजी महाराज के मुख से इन प्रसादी के लालाजी की महिमा सुनी थी। सो पू. गुरुजी की बहुत समय से उन लालजी को अपनेपास लाने की इच्छा थी।

स्कूल से अवकाश प्राप्त करने के बाद प्रिसिंपल साहब भावनगर रहने चले गए। प्रभु ने संजोग ऐसे बनाए कि दिल्ली के प.भ. अनुभाई महेता भावनगर के ही होने के कारण उन्होंने परिश्रम करके प्रिंसीपल साहब को ढूँढ लिये और..... पू. गुरुजी ने पुछवाया तो प्रिंसिपल साहब ने वे लालजी पू. गुरुजी को देने हाँ कर दी। 25-4-94 की सुबह पू. गुरुजी भावनगर गए... प्रिंसीपल साहब तो पू. गुरुजी को इस रूप में देखकर गद्गद् व अत्यंत भावविभोर हो गए और खूब खुश होकर अपने हाथों से पू. गुरुजी को लालजी दे दिए। हम सब का अहोभाग्य कि हमें सद्. गोपालानंदस्वामी की प्रसादीभूत कृष्णजी के दर्शन व अमूल्य सेवा का लाभ मिला।

* प.पू. हरिप्रसादस्वामिजी की 60वीं जयंती

24-4-94 की शाम को अहमदाबाद में सभी हरिभक्तों ने खूब हर्षोल्लास से मनाई। फिर 4 मई' 94, बुधवार अंग्रेजी तारीख के मुताबिक अशोक विहार-दिल्ली स्थित स्वामिनारायण मंदिर में स्थानीय रूप से पू. गुरूजी के सानिध्य में दिल्ली के हरिभक्तों ने सुबह 7.00 बजे एकत्रित होकर भजन, प्रार्थना, धून्य करी और प.पू. स्वामिजी की आशीर्वादरूप परावाणी का Cassetee द्वारा लाभ लेकर इस मंगलकारी अवसर को मनाया...सभी कृतार्थ हुए व प्रसाद लिया।

इस शुभ अवसर पर दिल्ली के पुराने जोगी प.भ. जानी साहब जिन्हें प.पू. काकाजी ने भगवान स्वामिनारायण के समय की चेतना बताया है उनके दो पोते चि.प्रणव व चि. सिद्धार्थ ने पू. गुरूजी के पवित्र हाथों से जनेऊ धारण किया। पू. स्नेहल स्वामी ने अद्‌भुत महापूजा करी और ऐसे समय सभी ने दिव्य वातावरण का अनुभव किया। छोटे बच्चों को भी धन्यवाद कि यज्ञोपवीत विधि के लिए बाल उतरवाने में पू. गुरूजी का छोटा वचन भी नीचे नहीं गिरने दिया और सहजता से विधि करवाई। परिवारजनों ने पू. गुरूजी के पास आशीर्वाद याचना की कि बच्चों ने जैसी सरलता से आज समर्पण किया है, वैसा प्रथम स्थान उनके जीवन में आपका ही रहे व सदैव आपके पास समर्पित रहें।

★ ★ ★

स्वामी की बातें

325. ध्यानी, प्रेमी इन सब से ज्ञानी श्रेष्ठ है। कितने ही प्रेमी चले गए, त्यागी चले गए, ध्यानी चले गए। यूं कई भिन्न अंग वाले चले गए, परन्तु जिन्होंने बड़े साधु से जी जोड़ा, वे टिक गये। *प्र–5,83*

326. सत्संग, एकांतिकभाव व भगवान की मूर्ति–ये तीन चीजें दुर्लभ हैं। वे हमें मिली है। सो गरीब होकर, दूसरों को मान देकर संभाल रखना। *प्र–5,86*

327. गरीब होने की रीत बताई कि–एक गांव में दो भाई बनिये थे। उन दोनों के पास चिंतामणि थी। राजा को जब पता चला तो उसने सेना भेजकर एक बनिये भाई को जीतकर चिंतामणि ले ली। दूसरा भाई चिंतामणि छिपी रखकर-फटे हुए चीथड़े पहनकर गरीब-सा होकर भीख माँगता बचकर निकल गया! तो उसके पास चिंतामणि बची रही। यूं गरीब होकर हम चिंतामणि संभाल कर रखें। *प्र–5,87*

328. सत्संग से भगवान जैसे वश होते हैं वैसे और कोई साधन से नहीं होते। वह सत्संग क्या? तो, प्रगट भगवान व प्रगट इस साधु का आसरा करने से कल्याण होता है। परोक्ष कथा–कीर्तन–वार्ता और पूजा आदि से कल्याण होता है ऐसा शास्त्रों में लिखा है, वह तो जीव को आलंबन–आधार दिया है। *प्र–5,88*

329. एक को तो भीतर में क्लेश होता है और एक को नहीं होता–उसका क्या समझना? स्वामी बोले कि घर में सांप हो और जब उसे चूहे खाने को मिलते रहें, तब तक वह खीझता नहीं और चूहों को बाहर निकाल दें, तो वह सांप घर के दूसरे जनों को काट खाता है। यूं ही मन तथा इन्द्रियों के ढंग से चले तो कोई

परेशानी नहीं होती, पर उन्हें मरोड़ कर चलें तो परेशानी होती है। प्र–5,89

330.महुआ के हरिभक्त ने पूछा कि पूरा सत्संग हुआ कैसे समझना? तब स्वामी बोले कि अक्षररूप हो जाये तब पूरा सत्संग हुआ समझना। फिर पूछा कि अक्षररूप हुए वह कैसे समझा जाये? तब स्वामी ने कहा गृहस्थ को ग्यारह नियम और त्यागी को तीन ग्रंथ–इतना पाले तो अक्षररूप हुए जानना। प्र–5,90

331. ......उद्धवजी तथा गोपियों की बात करी और प्रगट स्वरूप के ज्ञानी को अधिक कहा व प्रथम के 71 के वचनामृत की बात करी कि प्रगट की बात किए बिना तो यूं समझा जाये कि बद्रिकाश्रम–श्वेतद्वीप व गोलोक में जो भगवान हैं उसमें से थोड़े यहां है। परन्तु सर्वोपरि भगवान यहां माने नहीं जाते। इसलिए प्रगट की बातें करते हैं और ऐसा समागम मिला व अहो ! अहो ! नहीं होता तथा पागल नहीं हो जाते, वह तो भगवान ने जीव के कल्याण के लिए ही ऐसा रखा हुआ है, वर्ना पागल हो जाते। प्र–5,93

332. माया का रूप यह है कि भगवान का स्वरूप नहीं पहचाना जाये–वह ही माया है। फिर हरिशंकरभाई ने पूछा कि किसी के शब्द कान में पड़ने पर निश्चय होता है उसका क्या कारण है? तब बोले कि संस्कार है, वर्ना तो साथ में रहते हैं तब भी नहीं पहचानते। और यह साधु भगवान का अंग है, विभूति है; तब भी जूनागढ़ में दर-दर भीक्षा माँगते हैं और दर्शन देते हैं; नहीं पहचानते वे तो यादवों जैसे अभागे हैं। प्र–5,96

333. किसी मनुष्य में शांतभाव होता है और किसी में नहीं होता। किसी को विनय करना आता है और किसी को नहीं आता। यह सब देह के भाव समझना और बड़प्पन तो प्रगट भगवान के निश्चय से है व कागज में लिखे हैं इतने सब गुण तो भगवान में ही होते हैं, दूसरे में नहीं हो सकते। प्र–5,97

व्रतोत्सवसूची

1.	दि.	1.6.94	बुधवार	प्र.ब्र.स्व.प.पू. पप्पाजी महाराज का दृष्टा दिन
2.	दि.	5.6.94	रविवार	एकादशी, व्रत
3.	दि.	6.6.94	सोमवार	ब्र.स्व. गुरूहरि योगीजी महाराज की जन्मजयंती
4.	दि.	12.6.94	रविवार	ब्र.स्व. प.पू. काकाजी महाराज की जन्मजयंती
5.	दि.	19.6.94	रविवार	भगवान स्वामिनारायण का स्वधामगमन दिन
6.	दि.	20.6.94	सोमवार	एकादशी, व्रत

PUBLISHED BY SADHU MUKUNDJIVANDAS FOR YOGI DIVINE SOCIETY
A-103, Ashok Vihar-III, Swaminarayan Marg, Kakaji Lane
Delhi-110052 (India) Tel.: 7229327, 7249327
Printed at : Citizen Art Printers, Darya Ganj, New Delhi-2 Ph. : 3281025